संकलक
आशुतोष बंसल
श्रीमद् भगवद् गीता सार
PART - 9

अर्जुन विषाद योग - ARJUN VIṢHĀD YOG (CONSEQUENCES OF WAR)
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 1 श्लोक 40,41)

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः ।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ॥
अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः ।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥

जब कुल का नाश हो जाता है तब इसकी कुल परम्पराएं भी नष्ट हो जाती हैं और कुल के शेष बचे लोग अधर्म में प्रवृत्त होने लगते हैं। जब धार्मिक सिद्धांत नष्ट हो जाते हैं, तो अधर्म पूरे परिवार पर हावी हो जाता है ॥ हे वार्ष्णेय, अधर्म के आक्रमण से परिवार की स्त्रियाँ प्रदूषित हो जाती हैं। जब स्त्रियाँ भ्रष्ट होती हैं, तो जातियों का मिश्रण पैदा होता है ॥ जब एक परिवार नष्ट हो जाता है तो परिवार के सनातन रीति-रिवाज नष्ट हो जाते हैं।

अर्जुन विषाद योग - ARJUN VIṢHĀD YOG (CONSEQUENCES OF WAR)
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 1 श्लोक 42,43)

कुल का नाश करने वालों का संकरण ही नरक का एकमात्र मार्ग है। उनके पितर नीचे गिर जाते हैं और उनका तर्पण और जल देने का अनुष्ठान लुप्त हो जाता है ॥

ये दोष कुल के विनाश और जातियों के संकरण का कारण बनते हैं। जाति और परिवार की सनातन धार्मिक व्यवस्था नष्ट हो जाती है, ॥

विश्लेषणात्मक ज्ञान का सांख्य योग SĀNKHYA YOG OF ANALYTICAL KNOWLEDGE
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 13,20, 22)
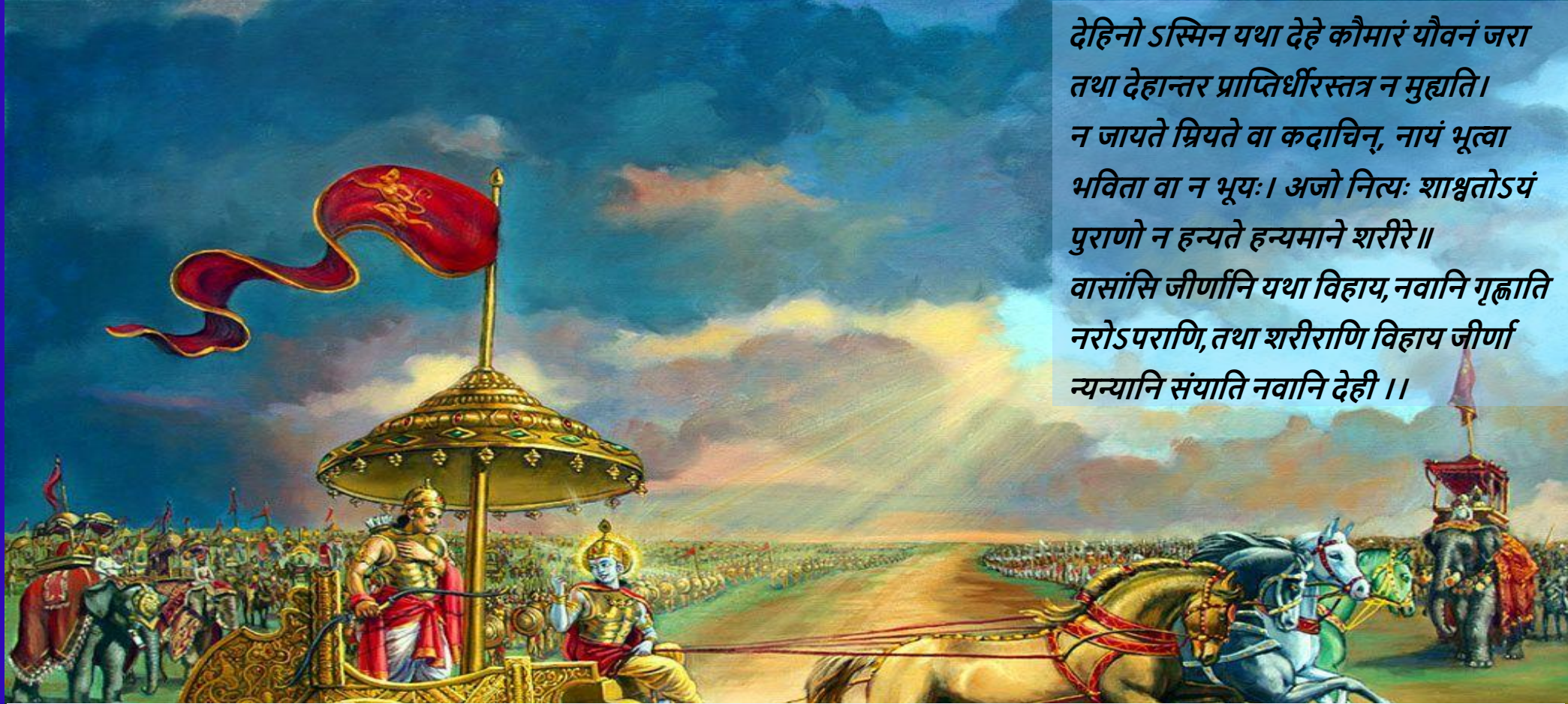
जिस प्रकार सन्निहित आत्मा निरंतर बाल्यावस्था से युवावस्था तक वृद्धावस्था में गुजरती है, उसी प्रकार मृत्यु के समय आत्मा दूसरे शरीर में प्रवेश करती है। ज्ञानी इससे अधीर नही होते।

आत्मा का न कभी जन्म होता है, न मृत्यु। यह न कभी पैदा होती है और न ही कभी समाप्त होती है। यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है। शरीर नष्ट होने पर भी आत्मा नष्ट नहीं होती।

जैसे कोई व्यक्ति पुराने और प्रयुक्त वस्त्रों को छोड़कर नए वस्त्र पहनता है, उसी प्रकार आत्मा अपने पुराने शरीरों को छोड़कर नए शरीरों को प्राप्त करता है।

विश्लेषणात्मक सांख्य योग - ANALYTICAL SĀNKHYA YOG
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 23,24)

ये आत्मा अविनाशी है, इसे ना तो आग जला सकती है, और ना ही पानी भिगो सकता है, ना ही हवा इसे सुखा सकती है और ना ही कोई शस्त्र इसे काट सकता है । आत्मा अटूट और अतुलनीय है ॥

इसे न तो गीला किया जा सकता है और न ही सुखाया जा सकता है। यह चिरस्थायी, अपरिवर्तनीय, अपरिवर्तनीय और आदिकाल में सर्वकालिक है ॥

विश्लेषणात्मक सांख्य योग ANALYTICAL SĀNKHYA YOG
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 37,37)

हे कौन्तेय, यदि तुम युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त होते हो तो तुम्हें स्वर्ग प्राप्ति होगी और यदि तुम युद्ध जीत जाते हो तो धरती पर स्वर्ग भोगोगे। इसलिए बिना कोई चिंता किये उठो और युद्ध करो ॥
कर्म करना तुम्हारा अधिकार है परन्तु फल की इच्छा करना तुम्हारा अधिकार नहीं है। कर्म करो और फल की इच्छा मत करो ॥

विश्लेषणात्मक ज्ञान का सांख्य योग (श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 48,49)

THE SĀNKHYA YOG OF ANALYTICAL KNOWLEDGE

हपार्थ अपनी बुद्धि, योग और चैतन्य द्वारा निंदनीय कर्मों से दूर रहो और समभाव से भगवान की शरण को प्राप्त हो जाओ ॥ जो व्यक्ति अपने सकर्मों के फल भोगने के अभिलाषी होते हैं वह कृपण हैं सफलता और असफलता की आसक्ति को त्यागकर सम्पूर्ण भाव से समभाव होकर अपने कर्म को करो। यही समत्वं योग कहलाती है ॥

विश्लेषणात्मक ज्ञान का सांख्य योग SĀNKHYA YOG OF ANALYTICAL KNOWLEDGE
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 50,51)

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥
कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥

जब कोई मनुष्य बिना आसक्ति के कर्मयोग का अभ्यास करता है तब वह इस जीवन में ही शुभ और अशुभ कर्मफलों से छुटकारा पा लेता है। इसलिए योग के लिए प्रयास करना चाहिए जो कुशलतापूर्वक कर्म करने की कला है। ईश्वरभक्ति में स्वयं को लीन करके बड़े बड़े ऋषि व मुनि खुद को इस भौतिक संसार के कर्म और फल(जीवन मरण के बंधनों और समस्त दुःखों से मुक्त कर लेते हैं ॥

विश्लेषणात्मक सांख्य योग ANALYTICAL SĀNKHYA YOG
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2. श्लोक 53, 55,56)
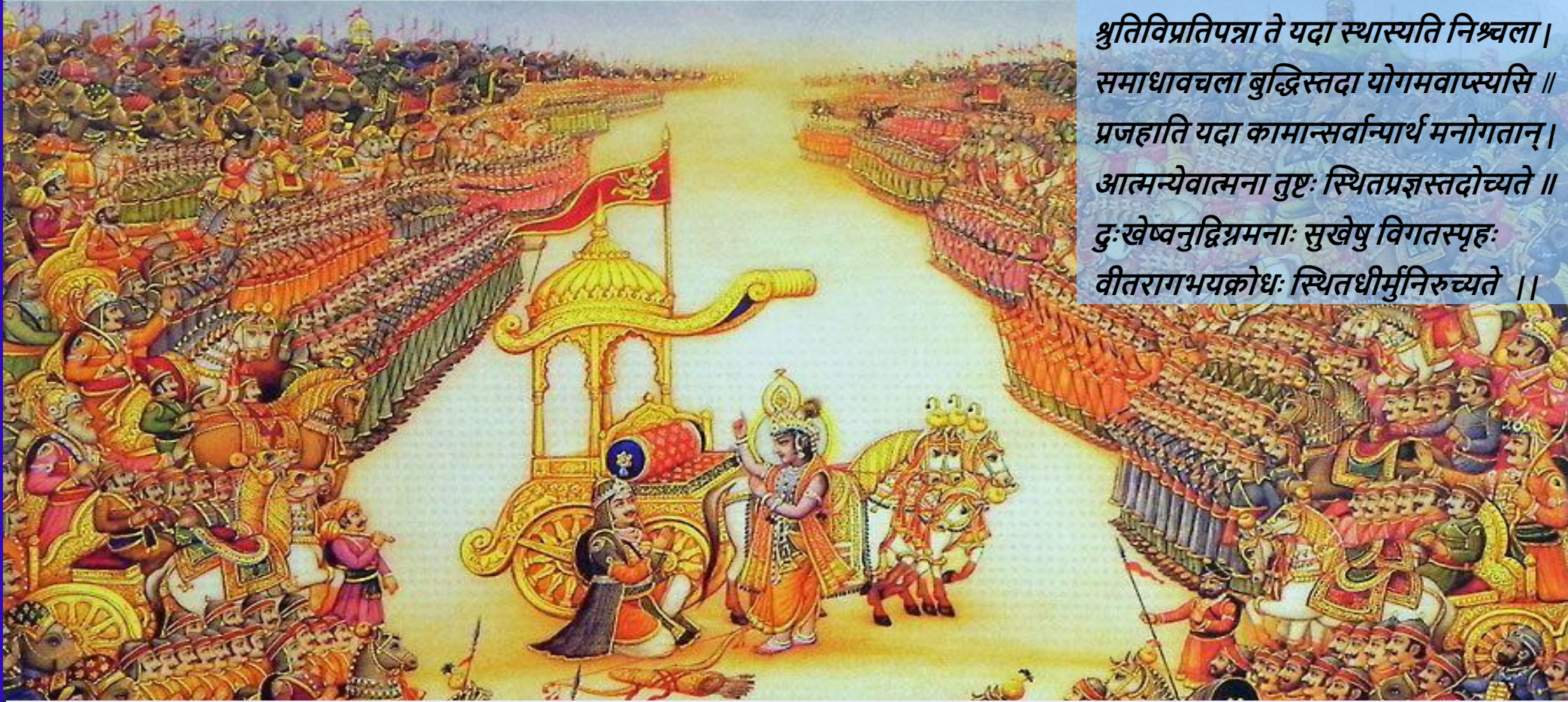
जब तुम्हारी बुद्धि का वेदों के अलंकारमयी भागों के प्रति आकर्षण समाप्त हो जाए और वह दिव्य चेतना में स्थिर हो जाए तब तुम पूर्ण योग की उच्च अवस्था का प्राप्त कर लोगे।

जब कोई मानव समस्त इन्द्रियों की कामनाओं पर विजय प्राप्त कर लेता है| जब विशुद्ध होकर मनुष्य आत्मा में संतोष की प्राप्ति करता है तब उसे विशुद्ध दिव्य चेतना (स्थितप्रज्ञ) की प्राप्ति हो जाती है ॥

दुःखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गए हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।

विश्लेषणात्मक सांख्य योग ANALYTICAL SĀNKHYA YOG
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2 श्लोक 62, 63)

विषयोंका चिन्तन करनेवाले मनुष्यकी उन विषयोंमें आसक्ति पैदा हो जाती है। आसक्तिसे कामना पैदा,कामनासे क्रोध , क्रोध होनेपर सम्मोह , सम्मोहसे स्मृति भ्रष्ट हो जाती है। स्मृति भ्रष्ट होनेपर बुद्धिका नाश हो जाता है ॥ बुद्धि का नाश होने से स्वयं उस मनुष्य का नाश हो जाता है ॥

कर्म योग-कर्म का विज्ञान - KARMA YOGA – SCIENCE OF ACTION
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 3. श्लोक 4,5, 6)

मनुष्य न तो कर्मों का आरंभ किए बिना निष्कर्मता को यानी योगनिष्ठा को प्राप्त होता है और न कर्मों के केवल त्याग मात्र से सिद्धि यानी सांख्यनिष्ठा को ही प्राप्त होता है ॥ कोई भी मनुष्य एक क्षण के लिए अकर्मा नहीं रह सकता। वास्तव में सभी प्राणी प्रकृति द्वारा उत्पन्न तीन गुणों के अनुसार कर्म करने के लिए विवश होते हैं। जो मूढ़ बुद्धि मनुष्य समस्त इन्द्रियों को हठपूर्वक ऊपर से रोककर मन से उन इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन करता रहता है, वह मिथ्याचारी-दम्भी कहा जाता है ॥

कर्म योग-कर्म का विज्ञान - KARMA YOGA – SCIENCE OF ACTION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 3. श्लोक 13,14,15)

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तोमुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः, भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्म कारणात्॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः, यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥
र्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् । तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥

आध्यात्मिक मनोवत्ति वाले जो लोग यज्ञ में अर्पित करने के पश्चात् भोजन ग्रहण करते हैं, वे सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाते हैं किन्तु जो अपनी इन्द्रिय तृप्ति के लिए भोजन बनाते हैं, वे वास्तव में पाप अर्जित करते हैं।सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न की उत्पत्ति वृष्टि से, वृष्टि यज्ञ से होती है, यज्ञ विहित कर्मों से उत्पन्न होने वाला है ॥ कर्मसमुदाय को तू वेद से उत्पन्न और वेद को अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हआ जान। सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है ॥

कर्म योग-कर्म का विज्ञान - KARMA YOGA – SCIENCE OF ACTION
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 3. श्लोक 21,22)

श्रेष्ठ मनुष्य जो कर्म करता है दूसरे व्यक्ति भी उसी का अनुसरण करते हैं। वह जो कार्य करता है, अन्य भी उसे प्रमाण मान वही करते हैं ॥
हे अर्जुन, तीनों लोकों में ना ही मेरे लिए कोई कर्तव्य है और ना कुछ प्राप्त करने योग्य अप्राप्त है फिर भी मैं कर्म को ही बरतता हूँ ॥

कर्म योग-कर्म का विज्ञान - KARMA YOGA – SCIENCE OF ACTION
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 3. श्लोक 27,29)

इस संसार में समस्त कर्म प्रकर्ति के गुणों द्वारा ही किये जाते हैं। "मैं कर्ता हूँ" सोचने वाले मनुष्य का अन्तःकरण अहंकार से भर जाता है॥
प्रकृति के गुणों से अत्यन्त मोहित हुए मनुष्य गुणों में और कर्मों में आसक्त रहते हैं, उन पूर्णतया न समझने वाले मन्दबुद्धि अज्ञानियों को पूर्णतया जानने वाला ज्ञानी विचलित न करे ॥

ज्ञान कर्म संन्यास योग - YOG OF KNOWLEDGE & DISCIPLINES OF ACTION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 4 श्लोक 5, 6)

हे अर्जुन, हमारा केवल यही एक जन्म नहीं है बल्कि पहले भी हमारे हजारों जन्म हो चुके हैं, तुम्हारे भी और मेरे भी परन्तु मुझे सभी जन्मों का ज्ञान है, तुम्हें नहीं है॥
मैं एक अजन्मा, कभी नष्ट ना होने वाली आत्मा हूँ। इस समस्त प्रकृति को मैं ही संचालित करता हूँ, इस समस्त सृष्टि का स्वामी मैं ही हूँ, मैं योग माया से इस धरती पर प्रकट होता हूँ,

ज्ञान कर्म संन्यास योग - YOG OF KNOWLEDGE & DISCIPLINES OF ACTION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 4 श्लोक 7,8)

ज्ञान कर्म सन्यास योग YOG OF KNOWLEDGE & DISCIPLINES OF ACTION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 4 श्लोक 22,23,39)

वे जो अपने आप स्वतः प्राप्त हो जाए उसमें संतुष्ट रहते हैं, ईर्ष्या और द्वैत भाव से मुक्त रहते हैं, वे सफलता और असफलता दोनों में संतुलित रहते हैं, जो सभी प्रकार के कार्य करते हुए कर्म के बंधन में नहीं पड़ते।

"वे सांसारिक मोह से मुक्त हो जाते हैं और उनकी बुद्धि दिव्य ज्ञान में स्थित हो जाती है क्योंकि वे अपने सभी कर्म यज्ञ के रूप में भगवान के लिए सम्पन्न करते हैं और इसलिए वे कर्मफलों से मुक्त रहते हैं।"

भगवान् में श्रद्धा रखने वाले मनुष्य, अपनी इन्द्रियों को वश में करके ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं और ज्ञान प्राप्त करने वाले ऐसे पुरुष शीघ्र ही परम शांति को प्राप्त करते हैं ॥

कर्म संन्यास योग - THE YOG OF RENUNCIATION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 5. श्लोक 15,16)

न तो कर्तापन की भावना और न ही कार्यों की प्रकृति भगवान से आती है; न ही वह कर्मों की के संयोग की रचना करते हैं यह सब भौतिक प्रकृति के गुणों द्वारा अधिनियमित किया जाता है ॥
सर्वव्यापी परमेश्वर भी न किसी के पाप कर्म को और न किसी के शुभकर्म को ही ग्रहण करता है, अज्ञान द्वारा ज्ञान ढँका हुआ है, उसी से सब अज्ञानी मनुष्य मोहित हो रहे हैं ॥
किन्तु जिनकी आत्मा का अज्ञान दिव्यज्ञान से विनष्ट हो जाता है उस ज्ञान से परमतत्त्व का प्रकाश उसी प्रकार से प्रकाशित हो जाता है जैसे दिन में सूर्य के प्रकाश से सभी वस्तुएँ प्रकाशित हो जाती हैं।

कर्म संन्यास योग THE YOG OF RENUNCIATION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 5 श्लोक 5,17)

न योगियों द्वारा जो परमधाम प्राप्त किया जाता है, कर्मयोगियों द्वारा भी वही प्राप्त किया जाता है। जो पुरुष ज्ञानयोग और कर्मयोग को फलरूप में एक देखता है, वही यथार्थ देखता है ॥

जब तुम्हारा मन कर्मों के फलों से प्रभावित हुए बिना और वेदों के ज्ञान से विचलित हुए बिना आत्मसाक्षात्कार की समाधि में स्थिर हो जायेगा तब तुम्हें दिव्य चेतना की प्राप्ति हो जायेगी ॥

कर्म संन्यास योग THE YOG OF RENUNCIATION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 5 श्लोक 23, 25)

जो साधक इस मनुष्य शरीर में, शरीर का नाश होने से पहले-पहले ही काम-क्रोध से उत्पन्न होने वाले वेग को सहन करने में समर्थ हो जाता है, वही पुरुष योगी है और वही सुखी है ॥
जिनके सब पाप नष्ट हो गए हैं, जिनके सब संशय ज्ञान द्वारा निवृत्त हो गए हैं, जो सम्पूर्ण प्राणियों के हित में रत हैं और जिनका मन निश्चलभाव से परमात्मा में स्थित है, वे ब्रह्मवेत्ता पुरुष शांत ब्रह्म को प्राप्त होते हैं ॥

ध्यानयोग THE YOG OF MEDITATION
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 6. श्लोक 1,4,5)

जो मनुष्य बिना कर्मफल की इच्छा किये हुए कर्म करता है तथा अपना दायित्व मानकर सत्कर्म करता है वही मनुष्य योगी है। जो सत्कर्म नहीं करता वह संत कहलाने योग्य नहीं है ॥
जिस काल में न तो इन्द्रियों के भोगों में और न कर्मों में ही आसक्त होता है, उस काल में सर्वसंकल्पों का त्यागी पुरुष योगारूढ़ कहा जाता है ।
विवेकयुक्त मन के द्वारा जीवत्वाभिमानी आत्मा को नीचे गिरने न दें क्योंकि शुद्ध मन ही जीवत्व अभिमानी आत्मा का उपकार करने वाला मित्र है, मन ही जीवात्मा का शत्रु है ॥

ध्यानयोग THE YOG OF MEDITATION
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 6. श्लोक 16,17,23)
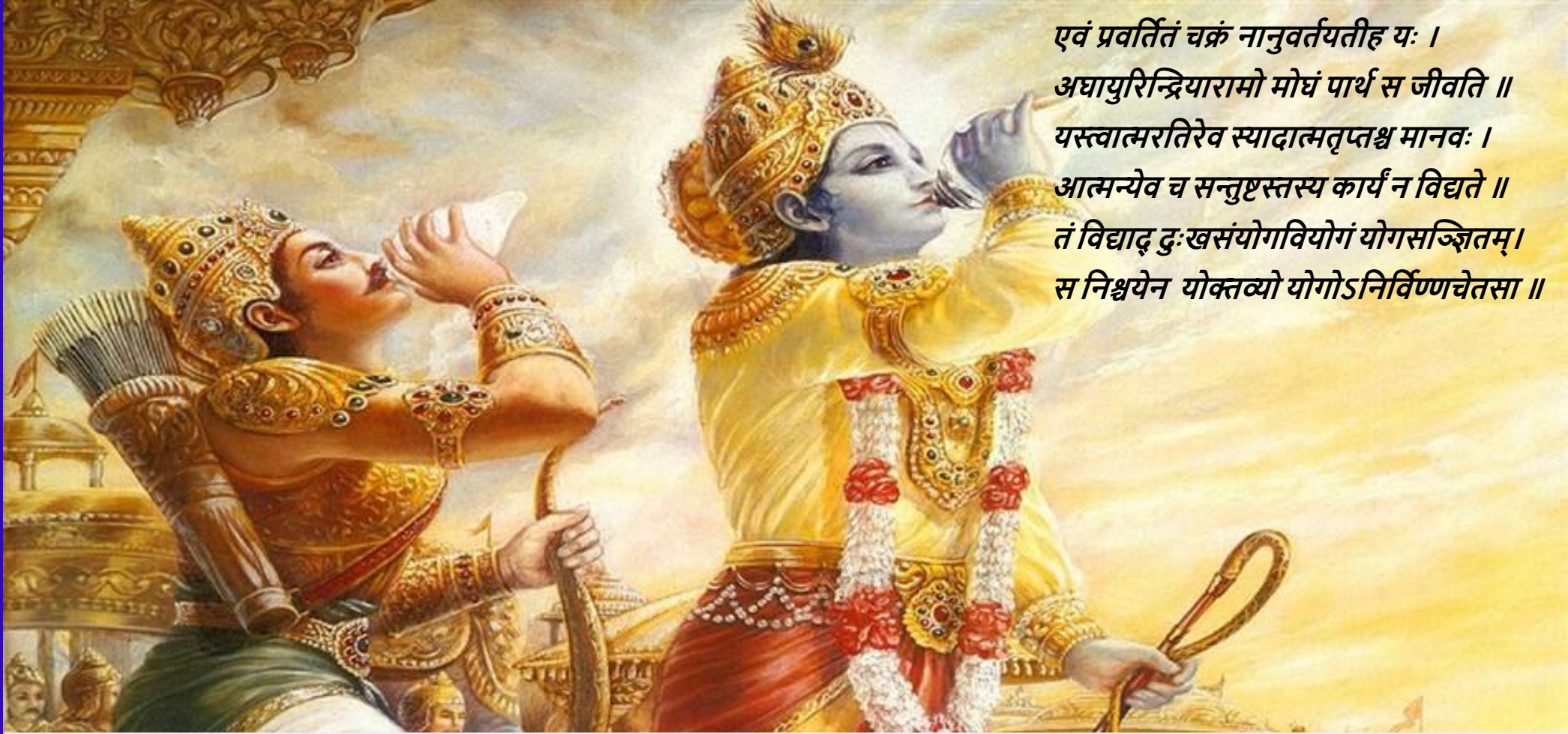
हे पार्थ! जो मनुष्य वेदों द्वारा स्थापित यज्ञ कर्म के इस चक्र का पालन नहीं करते, वे पाप अर्जित करते हैं, वे केवल अपनी इन्द्रियों की तृप्ति के लिए जीवित रहते हैं, वास्तव में उनका जीवन व्यर्थ ही है।

परन्तु जो मनुष्य आत्मा में ही रमण करने वाला और आत्मा में ही तृप्त तथा आत्मा में ही सन्तुष्ट हो, उसके लिए कोई कर्तव्य नहीं है ॥

जो दुःखरूप संसार के संयोग से रहित है तथा जिसका है, उसको योग नाम से जानना चाहिए। धैर्य और उत्साहयुक्त चित्त से, योग निश्चयपूर्वक करना कर्तव्य है ॥

ज्ञान विज्ञान योग - YOG THROUGH THE REALIZATION OF DIVINE KNOWLEDGE
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 7 श्लोक 4,5, 13)

माया के तीन गुणों (सत्व गुण, रजोगुण और तमोगुण), से मोहित इस संसार के लोग मेरे नित्य और अविनाशी स्वरूप को जान पाने में असमर्थ होते हैं। सारा संसार इन तीन गुणों पर ही मोहित रहता है।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ये सब मेरी प्राकृत शक्ति के आठ तत्त्व हैं।

ये मेरी अपरा शक्तियाँ हैं किन्तु हे महाबाहु अर्जुन! इनसे अतिरिक्त मेरी परा शक्ति है। यह जीव शक्ति है जिसमें देहधारी आत्माएँ (जीवन रूप) सम्मिलित हैं जो इस संसार के जीवन का आधार हैं।

अक्षर ब्रह्म (विनाशी भगवान) का योग - YOG OF AKṢHAR BRAHMA (ETERNAL GOD)
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 8 श्लोक 3,5)

परम अक्षर 'ब्रह्म' है, अपना स्वरूप अर्थात जीवात्मा 'अध्यात्म' नाम से कहा जाता है तथा भूतों के भाव को उत्पन्न करने वाला जो त्याग है, वह 'कर्म' नाम से कहा गया है।
जो पुरुष अंतकाल में भी मुझको ही स्मरण करता, शरीर को त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात स्वरूप को प्राप्त होता है- इसमें संशय नहीं ॥

राज विद्या द्वारा योग - YOG THROUGH THE KING OF SCIENCES
(श्री मद्भगवद्गीता अध्याय 9 श्लोक 8, 16, 17)

प्रकृतिम स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशम प्रकृतेर्वशात ।
अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्|
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम्॥
पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः |
वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च॥

इस समस्त प्रकृति को अपने वश में करके मौजूद समस्त जीवों को उनके कर्मों के अनुसार मैं बारम्बार रचता हूँ और जन्म देता हूँ
मैं ही वैदिक कर्मकाण्ड हूँ, मैं ही यज्ञ हूँ, मैं ही पितरों को दिया जाने वाला तर्पण हूँ, मैं ही औषधीय जड़ी-बूटी और वैदिक मंत्र हूँ, मैं ही घी, अग्नि और यज्ञ का कर्म हूँ।
मैं ही इस ब्रह्माण्ड का पिता, माता, आश्रय और पितामह हूँ। मैं ही शुद्धिकर्ता, ज्ञान का लक्ष्य और पवित्र मंत्र ओम् हूँ, मैं ही ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद हूँ।

राज विद्या योग - YOG THROUGH THE KING OF SCIENCES
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 9. श्लोक 18,19)

समस्त संसार में प्राप्त होने योग्य, समस्त जग का पोषण कर्ता, स्वामी, शुभाशुभ को देखने वाला, प्रत्युपकार की चाह बिना हित करने वाला, सबका वासस्थान, सबकी उत्पत्ति व प्रलय का हेतु, समस्त निधान और अविनाशी का कारण भी मैं ही हूँ। हे पार्थ, सूर्य का ताप मैं ही हूँ, मैं ही वर्षा को बरसाता हूँ और वर्षा का आकर्षण भी मैं हूँ। अमृत और मृत्यु में भी मैं ही हूँ और सत्य और असत्य में भी मैं हूँ।

राज विद्या योग YOG - THROUGH THE KING OF SCIENCES
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 9. श्लोक 22,26)
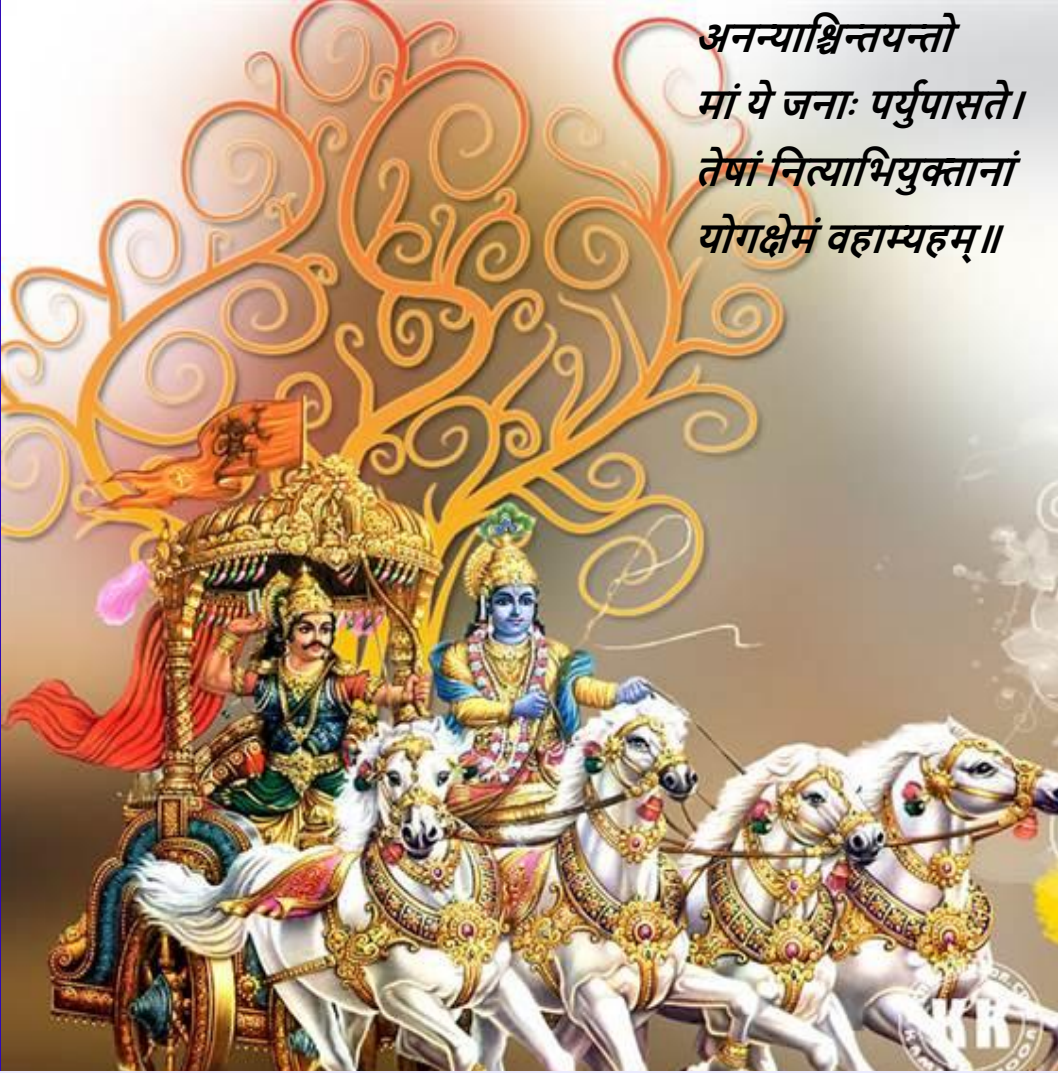
जो मेरे लिये प्रेम से पत्र, पुष्प, फल और जल अर्पण करता है। उस शुद्ध बुद्धि भक्त का प्रेमपूर्वक अर्पण किया हुआ पत्र-पुष्पादि मैं सगुण रूप से प्रकट होकर प्यार सहित स्वीकार करता हूँ। जो लोग मुझमें एकनिष्ठ भाव से निरंतर चिंतन करते हुए मेरी आराधना करते हैं, उन नित्य संलग्न भक्तों के योग-क्षेम का मैं स्वयं वहन करता हूँ।

भगवान के अनन्त वैभवों की स्तुति द्वारा योग - YOG BY PRAISE OF INFINITE OPULENCE OF GOD
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10 श्लोक 3,4,5)

जो मुझको अजन्मा अर्थात् वास्तव में जन्मरहित, अनादि और लोकों का महान् ईश्वर तत्त्व से जानता है, वह मनुष्यों में ज्ञानवान् पुरुष संपूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है॥ निश्चय करने की शक्ति, यथार्थ ज्ञान, असम्मूढ़ता, क्षमा, सत्य, इंद्रियों का वश में करना, मन का निग्रह तथा सुख-दुःख, उत्पत्ति-प्रलय, भय-अभय, अहिंसा, समता, संतोष तप-स्वधर्म के आचरण से इंद्रियादि को तपाकर शुद्ध करना, दान, कीर्ति,अपकीर्ति- ऐसे ये प्राणियों के नाना प्रकार के भाव मुझसे ही होते हैं ।

भगवान के अनन्त वैभवों की स्तुति द्वारा योग - YOG BY PRAISE OF INFINITE OPULENCE OF GOD
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10 श्लोक 6, 7)

जो पुरुष मेरी इस परमैश्वर्यरूप विभूति को और योगशक्ति को तत्त्व से जानता है, वह निश्चल भक्तियोग से युक्त हो जाता है- इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥सप्त महर्षिगण और उनसे पूर्व चार महर्षि और चौदह मनु सब मेरे मन से उत्पन्न हुए हैं तथा संसार में निवास करने वाले सभी जीव उनसे उत्पन्न हुए हैं।

भगवान के अनन्त वैभवों की स्तुति द्वारा योग - YOG BY PRAISE OF INFINITE OPULENCE OF GOD
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10 श्लोक 20,21,22,23)

मैं सब भूतों के हृदय में स्थित सबका आत्मा हूँ, संपूर्ण भूतों का आदि, मध्य और अंत भी मैं ही हूँ,
मैं अदिति के बारह पुत्रों में विष्णु हूँ, प्रकाशवान पदार्थों में सूर्य, मरूतों में मुझे मरीचि और नक्षत्रों में रात्रि का चन्द्रमा समझो।
मैं वेदों में सामवेद, देवताओं में स्वर्ग का राजा इन्द्र हूँ। इन्द्रियों के बीच में मन और जीवित प्राणियों के बीच चेतना हूँ।
मैं एकादश रुद्रों में शंकर, यक्ष तथा राक्षसों में धन का स्वामी कुबेर हूँ, मैं आठ वसुओं में अग्नि हूँ और शिखरवाले पर्वतों में सुमेरु पर्वत हूँ।

भगवान के अनन्त वैभवों की स्तुति द्वारा योग - YOG BY PRAISE OF INFINITE OPULENCE OF GOD
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10 श्लोक 25,31,32)

मैं महर्षियों में भृगु और शब्दों में ओंकार हूँ। सब यज्ञों में जपयज्ञ और स्थिर रहने वालों में हिमालय पहाड़ हूँ, मैं पवित्र करने वालों में वायु ,शस्त्रधारियों में श्रीराम हूँ। मछलियों में मगर हूँ और नदियों में श्री भागीरथी गंगाजी हूँ, सृष्टियों का आदि और अंत तथा मध्य भी मैं ही हूँ। मैं विद्याओं में अध्यात्मविद्या (ब्रह्मविद्या) और परस्पर विवाद करने वालों का तत्व-निर्णय के लिए किया जाने वाला वाद हूँ।

BHAKTI YOG THE YOG OF DEVOTION भक्तियोग भक्ति का विज्ञान
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 12. श्लोक 17)

जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है तथा जो शुभ और अशुभ सम्पूर्ण कर्मों का त्यागी है- वह भक्तियुक्त पुरुष मुझको प्रिय है।

प्राकृतिक शक्ति के तीन गुणों द्वारा योग का ज्ञान   YOG AND THE THREE MODES OF MATERIAL NATURE
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 14 श्लोक 11,12,13)

जब शरीर के सभी द्वार ज्ञान से आलोकित हो जाते हैं तब इसे सत्वगुण की अभिव्यक्ति मानो। जब रजोगुण प्रबल होता है तब हे अर्जुन! लोभ, सांसारिक सुखों के लिए परिश्रम, बचैनी और उत्कंठा के लक्षण विकसित होते हैं। हे अर्जुन! जड़ता, असावधानी और भ्रम यह तमोगुण के प्रमुख लक्षण हैं। जब यह मनुष्य सत्त्वगुण की वृद्धि में मृत्यु को प्राप्त होता है, तब उत्तम कर्म वालों के निर्मल दिव्य स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होता है ॥

प्राकृतिक शक्ति के तीन गुणों द्वारा योग का ज्ञान YOG AND THE THREE MODES OF MATERIAL NATURE
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 14 श्लोक 14,15, 16)

जिनमें सत्वगुण की प्रधानता होती है वे मृत्यु पश्चात ऋषियों के ऐसे उच्च लोक में जाते हैं जो रजो और तमोगुण से मुक्त होता है। रजोगुण की प्रबलता वाले सकाम कर्म करने वाले लोगों के बीच जन्म लेते हैं और तमोगुण में मरने वाले पशुओं की प्रजातियों में जन्म लेते है। श्रेष्ठ कर्म का तो सात्त्विक अर्थात् सुख, ज्ञान और वैराग्यादि निर्मल फल कहा है, राजस कर्म का फल दुःख एवं तामस कर्म का फल अज्ञान कहा है

प्राकृतिक शक्ति के तीन गुणों द्वारा योग का ज्ञान YOG AND THE THREE MODES OF MATERIAL NATURE
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 14 श्लोक 24,25)

वे जो सुख और दुख में समान रहते हैं, जो आत्मस्थित हैं, जो मिट्टी के ढेले, पत्थर और सोने के टुकड़े को एक समान दृष्टि से देखते हैं, जो प्रिय और अप्रिय घटनाओं के प्रति समता की भावना रखते हैं। वे बुद्धिमान हैं जो दोषारोपण और प्रशंसा को समभाव से स्वीकार करते हैं, जो मान-अपमान की स्थिति में सम भाव रहते हैं। जो शत्रु और मित्र के साथ एक जैसा व्यवहार करते हैं, जो सभी भौतिक व्यापारों का त्याग कर देते हैं-वे तीनों गुणों से ऊपर उठे हुए (गुणातीत) कहलाते हैं

संन्यास में पूर्णता और शरणागति के माध्यम से योग - YOG THROUGH THE PERFECTION OF RENUNCIATION
(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 18 श्लोक 66,78, विदुरनीति)

समस्त धर्मों से मुक्त होकर मेरी शरण में आ जाओ, मैं तुम्हें ही पापों से मुक्ति दिला सकता हूँ इसलिए शोक मत कर ॥

जहाँ योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं और जहाँ गाण्डीवधनुर्धारी अर्जुन हैं, वहीं श्री, विजय, विभूति और निश्चल नीति है- यह मेरा मत है॥

जो जैसा करे उसके साथ वैसा ही बर्ताव करो। जो तुम्हारी हिंसा करता है, तुम भी उसके प्रतिकार में उसकी हिंसा करो! इसमें मैं कोई दोष नहीं मानता, क्योंकि शठ के साथ शठता ही करने में उपाय पक्ष का लाभ है।

अष्टावक्र गीता अध्याय 11. श्लोक 3,5

आपदः संपदः काले दैवादेवेति निश्चयी।
तृप्तः स्वस्थेन्द्रियो नित्यं न वान्छति न शोचति॥
चिन्तया जायते दुःखं नान्यथेहेति निश्चयी।
तया हीनः सुखी शान्तः सर्वत्र गलितस्पृहः॥

ऐसा निश्चित रूप से जानने वाला संतोष और निरंतर संयमित इन्द्रियों से युक्त हो जाता है। वह न इच्छा करता है, न शोक ॥
चिंता से ही दुःख उत्पन्न होते हैं किसी अन्य कारण से नहीं, संपत्ति और विपत्ति का समय प्रारब्धवश है, ऐसा निश्चित रूप से जानने वाला, चिंता से रहित होकर सुखी, शांत और सभी इच्छाओं से मुक्त हो जाता है ॥

सुभाषितानि (विद्या)

विद्या विनय देती है, विनय से पात्रता आती है, पात्रता से धन आता है, धन से धर्म होता है, और धर्म से सुख प्राप्त होता है। विद्या रूपी धन, न चोरों द्वारा चुराया जा सकता है, न यह राजाओं द्वारा छीना जा सकता है, न भाइयों द्वारा बाँटा जा सकता है और न ही यह भार बढ़ाने वाला है। यह सदा ही खर्च करने पर बढ़ता ही है। विद्या धन सब धनों में प्रधान है ।

अष्टावक्र गीता अध्याय 11. श्लोक 6,8

नाहं देहो न मे देहो बोधोऽहमिति निश्चयी।
कैवल्यं इव संप्राप्तो न स्मरत्यकृतं कृतम् ॥
श्चर्यमिदं विश्वं न किंचिदिति निश्चयी।
निर्वासनः स्फूर्तिमात्रो न किंचिदिव शाम्यति ॥

न मैं यह शरीर हूँ और न यह शरीर मेरा है, मैं ज्ञानस्वरुप हूँ, ऐसा निश्चित रूप से जानने वाला जीवन मुक्ति को प्राप्त करता है। वह न भूतकाल और न भविष्य के कर्मों का स्मरण नहीं करता है ॥
अनेक आश्चर्यों से युक्त यह विश्व अस्तित्वहीन है, ऐसा निश्चित रूप से जानने वाला, इच्छा रहित और शुद्ध अस्तित्व हो जाता है। वह अपार शांति को प्राप्त करता है ॥

सुभाषितानि (विद्या)

विद्या, मनुष्य का रूपाधिक्य छुपा हुआ गुप्त धन है। विद्या भोग के साधन उपलब्ध कराने वाली, यश देने वाली, सुख देने वाली है। विद्या गुरुओं की गुरु होती है। विदेश में जाने पर विद्या मित्र है। विद्या देवताओं में सबसे बड़ी है। राजाओं में विद्या को पूजा जाता है, न कि धन को। विद्या के बिना मनुष्य पशु के समान होता है। विद्या अनुपम कीर्ति है; भाग्य का नाश होने पर वह आश्रय देती है, कामधेनु है, विरह में रति समान है, तीसरा नेत्र है, सत्कार का मंदिर है, कुल-महिमा है, बगैर रत्न का आभूषण है; इस लिए अन्य सब विषयों को छोडकर विद्या का अधिकारी बन ।एक एक क्षण गवाये बिना विद्या पानी चाहिए; और एक एक कण बचा करके धन ईकट्ठा करना चाहिए । क्षण गवानेवाले को विद्या कहाँ, और कण को क्षुद्र समजनेवाले को धन कहाँ ?

श्रीमद्भगवद्गीता का सार

श्रीमद्भगवद्गीता हिंदू धर्म का एक पवित्र ग्रंथ है, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को महाभारत के युद्धक्षेत्र में उपदेश दिया। यह ज्ञान न केवल अर्जुन के लिए था, बल्कि संपूर्ण मानवता के जीवन का मार्गदर्शन है।

आशुतोष बंसल